11

विद्यार्थियों के जीवन की नई राह गढ़ते शिक्षक

सुधा तैलंग*

विद्यालय औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में अध्यापक का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। बड़े से बड़े आकर्षक भवन, आकर्षक सरस पाठ्यपुस्तकें, तकनीक के साधन, शिक्षण-सामग्री सभी कुछ एक तरफ हैं और शिक्षक की भूमिका एक तरफ। कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षक के बिना औपचारिक विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था की कल्पना नहीं की जा सकती। ऐसे में शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह विद्यार्थियों को अपना 'समस्त' देने का प्रयास करें। बहुत से अध्यापक ऐसे हैं जो यांत्रिक तरीके से पढ़ाकर अपने अध्यापन कर्तव्य की इतिश्री कर लेते हैं परंतु बहुत से अध्यापक अपने व्यक्तित्व, अपने व्यवहार, शिक्षण-अधिगम के तरीकों से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर अमिट प्रभाव छोड़ते हैं। वे उनके जीवन की राहों को सही आकार देने के अवसर जुटाते हैं। ऐसे ही अनुभवों का साक्षात्कार कराता हुआ आलेख 'विद्यार्थियों के जीवन की नई राह गढ़ते' प्रस्तुत है।

विद्यालय औपचारिक शिक्षा के केंद्र हैं। शिक्षा बच्चों की प्रसुप्त रुचियों, गुणों, ज्ञान व अंतर्निहित शक्तियों को उभार कर उन्हें प्रस्फुटित करती है। शिक्षा का अर्थ मात्र किताबों को पढ़कर उनसे हासिल की गई जानकारी नहीं हैं, बल्कि पढ़-लिख लेने के साथ-साथ व्यावहारिक समझ और ज्ञान हासिल करना बहुत ज़रूरी है। आज के बच्चों व उनके माता-पिता की यही आकांक्षा रहती है कि बच्चे पढ़ाई के साथ खेलकूद, नृत्य संगीत, वाद-विवाद, ड्राइंग-पेन्टिंग, लेखन सभी क्षेत्रों में आगे आएँ। बहुमुखी प्रतिभा के धनी बनें। उनकी छिपी प्रतिभा, रुचि सबके सामने आ सके इसके लिए वे भरसक कोशिश करते हैं। आज के विद्यालयों में पढ़ाई के साथ अन्य गतिविधियों पर पूरा ज़ोर दिया जा रहा है। पूरे अकादमिक स्तर में तरह-तरह की प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं। बच्चों को उनमें भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

विद्यालय बच्चों के व्यक्तित्व के विकास में एक अहम भूमिका निभाता है, जहाँ आकर विद्यार्थी प्रात: कालीन सभा के साथ अपनी पढ़ाई की शुरुआत कर भक्ति, शक्ति, अनुशासन व एकता, शांति, भाईचारे का पाठ सीखते हैं। राष्ट्रप्रेम व सांस्कृतिक एकता के साथ खुद को अभिव्यक्त करने का अवसर पाते हैं। अपनी झिझक को दूर करते हैं। नन्हे-मुन्नों के भीतर कुछ न कुछ प्रतिभा जन्मजात होती है और वह घर में

* सिमरन अपार्टमेंट – 02 त्रिलंगा, भोपाल

माता-पिता के प्रोत्साहन से व स्कूल में शिक्षकों या साथियों के प्रोत्साहन से ही उभर कर सामने आती है। दबी हुई प्रतिभा प्रस्फुटित होकर एक हुनर का रूप लेकर बच्चों के व्यक्तित्व का विकास करती है।

प्रायःदेखा जाता है कि कुछ बच्चे पढ़ाई-लिखाई में तो सामान्य होते हैं। पर वे खेलकूद, ड्राइंग अभिनय या लेखन, भाषण या नृत्य संगीत में बेहद प्रतिभाशाली होते हैं। ऐसे में उन बच्चों को यदि पढ़ाई के संग उनकी रुचि के क्षेत्रों में प्रोत्साहन दिया जाए तो आगे जाकर वे निश्चय ही एक बेहतर खिलाड़ी, गायक, लेखक बन सकते हैं और विशेष प्रतिभा का प्रदर्शन कर सकते हैं।

मेरे दीर्घ अध्यापन काल के दौरान मुझे ऐसे ढेरों बच्चों को पढ़ाने का मौका मिला जो पढ़ाई में तो औसत थे पर किसी दूसरे क्षेत्र में हमेशा अव्वल आते थे। मैंने ऐसे बच्चों को पहचाना। उन्हें प्रोत्साहन देना शुरू किया। मुझे बेहतर परिणाम मिले। मेरे स्कूल में एक आदिवासी छात्रा थी मुनिया। उसके पिता किसान थे। घर में पढ़ाई का माहौल नहीं था। वह पढ़ने में एक औसत दर्जे की छात्रा थी। पर ढोलक बजाने व लोकगीत गाने में उसका मुकाबला स्कूल क्या पूरी तहसील में भी कोई नहीं कर पाता था। मैंने उसे स्कूल के कार्यक्रमों के साथ अंतर्विद्यालयीन व जिला स्तरीय संगीत प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। वह बुंदेलखंडी लोकगीत प्रतियोगिता में पूरे जिले में अव्वल आई। धीरे-धीरे उसकी पढ़ने में भी रुचि जागी। उसने बारहवीं परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। अब वह संविदा शिक्षाकर्मी के पद पर काम कर रही है। आदिवासी ग्रामीण इलाके के पिछड़े क्षेत्र में शादी के बाद भी वह घर व बाहर का काम सँभाल रही है। जब भी मुझसे मिलती है तो कहना नहीं भूलती, "मैडम यदि आप प्रोत्साहित नहीं करतीं तो मैं पढ़ाई भी पूरी नहीं कर पाती, नौकरी की तो बात छोड़ो।" मुझे प्रसन्नता होती है कि जब हमारे पढ़ाये हुए बच्चे किसी भी क्षेत्र में कोई मुकाम हासिल करते हैं। यही शिक्षक के लिए असली गुरु-दक्षिणा होती है।

अधिकतर यह देखने में आता है कि कई अभिभावक अपने बच्चों को केवल पढ़ाई-लिखाई के कामों में ही अपनी पूरी ऊर्जा झोंक देने के लिए बाध्य करते रहते हैं। बच्चों के खेलने, कूदने, गीत-संगीत, स्कूल के अन्य कार्यक्रमों में भाग लेने पर रोक लगाते हैं। उनकी इसी धारणा के चलते वे बच्चे पढ़ाई-लिखाई से जुड़े कामों में अंक तो अधिक प्राप्त कर लेते हैं वे भी वहाँ, जहाँ रटने का काम हो, पर व्यावहारिक जीवन के क्षेत्र में पिछड़ जाते हैं।

मेरे ही स्कूल की एक छात्रा ने बारहवीं में टॉप किया पर जब उसे कभी भाषण के लिए या किसी कार्यक्रम का संचालन करने के लिए कहा जाता था तब स्टेज पर आते ही उसके हाथ-पाँव काँपने लगते। उसकी ये कमज़ोरी उसे आगे पीएससी परीक्षा के इंटरव्यू के समय भारी पड़ी। यदि उसके अभिभावक पढ़ने के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी गतिविधियों में भी उसे भाग लेने का मौका देते तो वह जीवन जीने की व्यावहारिक कला में भी अव्वल आती। उसे संभवतया इस तरह की स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता।

विद्यालय में पढ़ाई के साथ-साथ पूरे साल महान व्यक्तियों की जयंती, महत्वपूर्ण दिवस, सेमिनार, विज्ञान मॉडल प्रदर्शनी, मेले, प्रश्नमंच, खेलकूद, गीत-संगीत-नृत्य की प्रतियोगिताएँ होती रहती हैं।

बाल-सभा के आयोजन प्रति सप्ताह, बच्चों को अपनी प्रतिभा, हुनर की अभिव्यक्ति का मंच प्रदान करते हैं। स्कूल के मंच पर ही बच्चों को अपनी प्रतिभा का पता चलता है। भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिस्पर्धाओं व गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिलने पर उन्हें पता चलता है कि उनमें कौन-कौन से हुनर मौजूद हैं। उनके हुनर और प्रतिभा को विकसित होने के मौके उन्हें मिलने चाहिए और इसके लिए हम अध्यापकों का दायित्व है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में तरह-तरह की गतिविधियों के आयोजन की संभावनाएँ बनाएँ व विद्यार्थियों को उनमें भाग लेने के लिए सतत रूप से प्रोत्साहित करते रहें। हम शिक्षकों का पूरा दायित्व बनता है कि हम ऐसे बच्चों को आगे आने का अवसर प्रदान करें, जो किसी कारण से अपने को अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं।

हमारे स्कूल में कुछ दृष्टिबाधित विद्यार्थी भी पढ़ते हैं। वे तबला, हारमोनियम बजाने के साथ गाने में भी रुचि रखते हैं। यद्यपि उनके पास संगीत एक विषय के रूप में भी है, पर संकोच के कारण व अध्यापक द्वारा प्रोत्साहित न किये जाने के कारण वह हमेशा सांस्कृतिक कार्यक्रमों से दूरी बनाए रखते हैं। मैंने ये सब देखा तो ऐसे बच्चों को प्रोत्साहित कर आगे लाने की कोशिश की। कुछ ही दिनों में वे स्वयं सभी कार्यक्रमों में भागीदारी करने लगे। इन घटनाओं को देखते हुए मेरा ये मानना है कि शिक्षक चाहे तो बच्चों में सोई हुई प्रतिभा को जगाकर उन्हें आगे बढ़ने में मदद कर सकते हैं।

मेरी कक्षा का ही एक छात्र अमित बेहद शरारती था। सभी बच्चे व अध्यापक यहाँ तक उसके अभिभावक भी उससे परेशान थे। उस पर सजा देने या डाँट का असर नहीं पड़ता था। जब भी मैं पढ़ाती तब देखती कि वह कॉपी में कुछ न कुछ कलाकारी करता रहता। एक दिन उठकर मैंने उसकी कॉपी देखी। बेहद सुंदर स्केच बनाया हुआ था। मैंने डाँटने की बजाय उसे शाबासी देते हुए पूछा, "तुम ड्राइंग बनाते हो? तुमने पहले क्यों नहीं बताया।?" मैंने उसको स्कूल के पर्यावरण व मोगली उत्सव की प्रतियोगिता में चित्र बनाने की बात कही। उस दिन वह बेहद खुश हुआ। बस मेरी कोशिश रंग लाई। शैतानी के लिए पूरे स्कूल में प्रसिद्ध अमित अब पेंटिंग में अपनी पहचान बना चुका था। धीरे-धीरे उसके व्यवहार में बदलाव आ गया। पढ़ाई में भी वह रुचि लेने लगा। मेरा मानना है कि हम अध्यापकों को अपना धैर्य, आपा न खोकर बच्चों की, खासतौर पर विशेष ज़रूरत वाले बच्चों की रुचियों को ढूँढ़कर उन्हें प्रोत्साहन देकर सकारात्मक प्रवृत्तियों की ओर उनके रुख को मोड़ने की कोशिश करनी चाहिए।

यही हाल एक और छात्र शुभम का भी रहा। वह पढ़ाई में तो अच्छा था पर कक्षा में दूसरे बच्चों को तंग करता था। डाँटने का उस पर असर नहीं होता था। सुधार के प्रयास के तौर पर उसे कक्षा का मॉनीटर बना दिया गया। उसे मॉनीटर के उत्तरदायित्वों के बारे में समझा दिया गया और कुछ रचनात्मक कामों में संलग्न भी कर दिया। बस उस दिन से वह अपनी शैतानी भूलकर दूसरे बच्चों की मॉनीटरिंग करने लगा। हम अध्यापक, बच्चों

को नई दिशा देकर उनको सुधारने की एक कोशिश करें तो निश्चित ही सफलता अवश्य मिलेगी।

कई बार शिक्षक को किसी विषय के प्रभावशाली व रोचक अध्यापन में भी दिक्कत आ सकती है। यही हाल कक्षा 11वीं के कला संकाय के हिंदी विषय के अध्यापन में हुआ। बच्चों की रुचि हिंदी विषय के पठन-पाठन में कम ही रहती थी। कुछ बच्चे प्रायः कहते, "मैडम, हिंदी तो सरल है हम घर में ही तैयारी कर लेंगे।" ग्यारहवीं के बच्चों का हिंदी का अशुद्ध उच्चारण और लेखन भी अशुद्ध देख कर मुझे बेहद दुख होता। मैंने उनमें रुचि जगाने हेतु हरिशंकर परसाई जी का व्यंग्य "भोलाराम का जीव" का विद्यार्थियों से ही नाटक तैयार करने को कहा। बस फिर क्या था, मेरी कोशिश काम आई। बच्चों ने स्वयं संवाद लिखे। कक्षा में पात्र गढ़कर सहज ढंग से नाटक को अभिनीत भी किया। उसके बाद उनकी रुचि जागी। नाटक को पुरस्कार भी मिला। शिक्षक चाहे तो विषय को सरस, रोचक बनाकर छात्रों में रुचि जगा सकता है।

कक्षा में बच्चों को प्रेरित करते हुए शिक्षक का यह कर्तव्य बनता है कि वह छात्र-छात्राओं में भेदभाव न करें। पक्षपात न करें वरना बच्चों में हीन भावना आ सकती है। साथ ही अभिभावक बैठकों में भी हमें बच्चों के माता-पिता को उनके हुनर, अभिरुचियों को प्रोत्साहित करने की बात ज़रूर करनी चाहिए। हमारी एक छोटी-सी कोशिश, प्रयास उन नौनिहालों को एक नई दिशा प्रदान कर सकता है। उनके संपूर्ण व्यक्तित्व और जीवन को बदल सकता है। मेरे शिक्षक बनने के पीछे भी मेरे एक गुरू की प्रेरणा रही है। बीकानेर के प्राइमरी स्कूल के हेडमास्टर बी.के. व्यास जी ने पढ़ाई के साथ-साथ तकली से सूत कातने से लेकर, क्राफ्ट, ड्राइंग, पेटिंग, सुलेख, खेलकूद के साथ लेखन के लिए हमेशा मुझे प्रोत्साहित किया। खेल-खेल में एक बार कुर्सी पर बैठकर टीचर बनकर क्लास को पढ़ाने पर उनके द्वारा डाँट तो पड़ी पर साथ ही टीचर बनने का सपना बचपन में देखा। वह उनकी प्रेरणा से ही सन् 1982 में मध्य प्रदेश स्कूल शिक्षा विभाग में संस्कृत शिक्षक बनकर पूरा हो गया। शिक्षकों की प्रेरणा छात्रों के लिए एक अनमोल धरोहर होती है, जिसे वह जीवन पर सँभाल कर, सहेज कर रखते है।

पर आज के दौर में गुरु-शिष्य के रिश्ते बदल रहे हैं। विद्यालय व्यवसाय के केंद्र बन रहे हैं। फिर भी शिक्षकों का ये पूरा कर्तव्य बन जाता है कि वे बच्चों को किताबी ज्ञान के साथ-साथ उन्हें व्यावहारिक ज्ञान भी देने की कोशिश करें। देखा जाए तो आज के शिक्षकों के पास पढ़ाने के अलावा ढेरों दूसरे काम भी हैं। इस कंप्यूटर युग में आज की बाल-पीढ़ी भी बेहद प्रतिभाशाली व महत्वाकांक्षी है जो पुरानी पीढ़ी से कहीं ज्यादा क्रियाशील व हर क्षेत्र में आगे हैं। आज की बाल पीढ़ी बेहद प्रतिभावान है। बस ज़रूरत है शिक्षकों द्वारा उन्हें प्रेरित कर आगे बढ़ाने की और मौका देने की। हमारी कोशिश से हो सकता है कोई छात्र आगे जाकर एक नामी खिलाड़ी बन जाए तो कोई गायक या पेंटर या लेखक या अभिनेता। क्योंकि शिक्षक ही विद्यार्थियों का भविष्य निर्माण कर उनके लिए नई राह गढ़ सकते हैं।